भूमिका ■

हरियाणवी जैन कथायें

सुप्रसिद्ध एवम् स्वनामधन्य सर्जक गुरुदेव श्री सुभद्र मुनि जी महाराज द्वारा सृजित प्रस्तुत कृति का ऐतिहासिक महत्त्व है। केवल इस कारण नहीं कि यह वर्तमान समय की मांग है, अपितु इस कारण भी कि यह इतिहास के निरन्तर लिखे जा रहे ग्रंथ में मौलिकता एवम् नवीनता का ऐसा अध्याय जोड़ने वाली रचना है, जो एकाधिक दृष्टियों से अभूतपूर्व महत्त्व से सम्पन्न है। दूसरे शब्दों में, इतिहास के लिए अनिवार्य बन जाने वाली विरल रचनाओं में से एक है-**'हरियाणवी जैन कथायें'**।

आरम्भ से ही जैन साहित्य की विशेषता रही है कि वह सदैव आभिजात्य भाषा के स्थान पर जन-भाषा के ही रूप में अभिव्यक्त हुआ। भगवान् महावीर की देशना अपने समय की अभिजात अथवा कुलीन भाषा-संस्कृत में नहीं अपितु उस समय की जन-भाषा-प्राकृत में मिलती है। इसे केवल भाषा-विषयक चुनाव ही कहकर टाला नहीं जा सकता। वास्तव में यह उस दृष्टिकोण का परिणाम है, जिसे न तो कभी स्तरीय कहलाने का मोह रहा और न ही कभी पुरस्कार आदि पाकर प्रतिष्ठित होने का। उसका उद्देश्य यदि कोई रहा तो केवल अधिक से अधिक लोगों तक अपना मंगलकारी मंतव्य पहुंचा कर उन्हें अधिक से अधिक लाभान्वित करना। यह उद्देश्य जन-भाषा को माध्यम बना कर ही सिद्ध हो सकता था, जो हुआ भी। इतिहास साक्षी है कि जैन साहित्य का महत्त्वपूर्ण अधिकांश प्राकृत, शौरसेनी, राजस्थानी, गुजराती, कन्नड़ आदि जन-भाषाओं तथा बोलियों में रचा गया। हरियाणवी भाषा में जैन साहित्य का सृजन और प्रकाशन लगभग नहीं हुआ। जैन धर्म की हरियाणा में भी पर्याप्त उपस्थिति के बावजूद यदि जैन साहित्य का सृजन-प्रकाशन हरियाणवी में नहीं हुआ तो इसका एक कारण यह भी है कि यहां का शिक्षित वर्ग इस ओर से प्रायः उदासीन रहा। **हरियाणवी में जैन कथाओं का यह पहला संकलन है और यह इसके ऐतिहासिक महत्त्व का एक आयाम है। इस आयाम की सहज विशेषता है- जैन सहित्य को रचनात्मक रूप प्रदान करते हुए उसके प्रचार-प्रसार में वृद्धि करना और उसे अक्षर (जिस का क्षरण न हो) बनाना।**

इसके ऐतिहासिक महत्त्व का दूसरा आयाम है- हरियाणवी साहित्य के लिए अभूतपूर्व योगदान करना। हरियाणवी में अब तक पद्य-गीतों (रागणियों) और स्वांगों (सांग) के रूप में ही थोड़ा बहुत साहित्य उपलब्ध रहा है। वह भी मौखिक रूप में अधिक और लिखित रूप में कम। परिणामतः हरियाणवी साहित्य की अनेक रचनायें मात्र स्मृति पर आधारित होने के कारण धुंधली पड़ते हुए लुप्त होती जा रहीं हैं। जो हैं वे या तो पद्य रूप में हैं और या फिर

लोक-नाट्य के रूप में। गद्य के रूप में हरियाणवी साहित्य लगभग नहीं है। कथाकार गुरुदेव श्री सुभद्र मुनि जी महाराज ने इस अभाव को रचनात्मक ढंग से अनुभव किया, जिसका परिणाम है यह कहानी-संकलन। वास्तव में यह ऐसा प्रथम संकलन है, जिस में हरियाणवी को ही सभी कहानियों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया गया है। इस दृष्टि से इन का ऐतिहासिक महत्त्व निर्विवाद रूप से स्वतः सिद्ध है। यह रचना इस बात का जीता-जागता प्रमाण भी है कि **हरियाणवी हिन्दी की एक ऐसी बोली है, जिसमें स्वतंत्र भाषा के लिए अपेक्षित क्षमताएं और सम्भावनाएं पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं**। हरियाणवी का यह दुर्भाग्य है कि अब तक उसे विविध गद्य-विधाओं की समर्थ रचनायें लिपिबद्ध रूप में प्राप्त नहीं हो सकीं। हरियाणवी के बोली मात्र रह जाने के प्रमुख कारणों में से यह भी एक है। अन्यथा समर्थ सहित्य संपदा के कारण हरियाणवी को भी उसी तरह 'भाषा' की मान्यता प्राप्त होती, जिस तरह मध्य काल में अवधी और ब्रज को प्राप्त हुई। 'हरियाणवी जैन कथायें' इस दृष्टि से भी ऐतिहासिक महत्त्व की सहज अधिकारिणी कृति है। यदि इसी प्रकार हरियाणवी की साहित्य-श्री समृद्ध होती रही तो वह दिन दूर नहीं जब हरियाणवी को भी एक समर्थ भाषा माना जाने लगेगा। यदि ऐसा हुआ तो **'हरियाणवी जैन कथायें जैसी कृतियां हरियाणवी साहित्य-भवन की मजबूत और गौरवशाली नींव सिद्ध होंगी**। अनेक हरियाणवी विद्धान् और साधारण पाठक आश्चर्य-चकित रह जायेंगे यह देख कर कि हरियाणवी में ऐसी कहानियां भी रची और लिखी जा सकती हैं। हरियाणवी साहित्य के लिए गुरुदेव का यह मौलिक और वृद्धिकारी योगदान अविस्मरणीय रहेगा।

धर्म इस पुस्तक की आत्मा है और हरियाणवी इसका शरीर। साहित्य-समीक्षा की शब्दावली का प्रयोग किया जाये तो धर्म इसकी अंतर्वस्तु है और हरियाणवी इसका रूप। यहां अभिव्यंजित धर्म की विशेषता है कि दुरूहता इसमें लेश-मात्र भी नहीं। हरियाणा के लोगों की तरह सीधे-सीधे साफ साफ ढंग से अपनी बात ये कहानियां कहती हैं। यही कारण है कि इन्हें पढ़ने वालों को यह कहीं नहीं लगता कि वे जैन धर्म के उच्चतम मूल्यों को पढ़ रहे हैं जबकि वास्तविकता यही है। यह इन कहानियों की सहजता का सूचक है। महान् उद्देश्यों को इतने सहज-सरल ढंग से अभिव्यक्त करना सभी रचनाओं के लिए एक दुःसाध्य चुनौती रही है, जिसे ये कहानियां बखूबी साध लेती हैं। व्यापक पाठक-वर्ग की उत्सुकता निरन्तर जगाये रखते हुए ये जैन धर्म की अनेक मान्यताओं से उसका सहज परिचय करा देने में पूर्णतः समर्थ हैं।

इनकी सामर्थ्य का एक पक्ष यह है कि जीवन के जटिल से जटिल प्रसंगों को भी उस हरियाणवी में ये आसानी से पिरो देती हैं, जिसके अस्तित्व का आधार ही रहा है -सहजता। जैसे 'आत्मालोचना' जीवन का एक जटिल प्रसंग है, 'आनंद का खुज्जाना' शीर्षक कहानी में 'कप्पिल' चोरी का संदेह होने के कारण राजा के पहरेदारों द्वारा पकड़ा जाता है। न्याय के लिए राजदरबार में उसे पेश किया जाता है तो वह अपने निर्दोष होने से जुड़ी बातें बताता

है। राजा को न केवल उसके निर्दोष होने का विश्वास हो जाता है अपितु उस से वह इस सीमा तक प्रभावित भी हो जाता है कि उसे कुछ भी मांग लेने के लिए कहता है। तब 'कप्पिल' सोचता है कि आखिर वह क्या मांगे जो जीवन-भर उसे आनन्द देता रहे। विचार करते-करते वह इस नतीजे पर पहुंचता है कि उसे राजा का समूचा राज्य ही मांग लेना चाहिए। वह राज्य मांगने वाला ही होता है कि **"उसके दमाग मैं बीजली-सी चिमकी! एक नई ए बात उसके जी मैं आई- कप्पिल! तन्नै धिक्कार सै! तू इतणा गिर ग्या, जो राज्जा तन्नैं इनाम देणा चाह्वै सै तू उस्सै नैं बरबाद करण की सोच्चण लाग र्‌ह्या सै! धिक्कार सै मन्नैं अर धिक्कार सै मेरे जी की तिरिस्ना नैं!"** यहां ध्यान देने योग्य विशेषता इस कहानी-कला की यह है कि 'कप्पिल' के मन में जो भाव आ-जा रहे हैं, उनका गतिशील चित्र उभरकर सामने आ जाता है। इस प्रकार आत्मालोचना जैसी अदृश्य प्रक्रिया को भी दृश्य रूप मिलता है। हरियाणवी भाषी लोग यह अच्छी तरह जानते हैं कि मन में घटित होने वाली प्रक्रियाओं को ठीक-ठीक शब्द देना कितना कठिन कार्य है! इन कहानियों में अनेक स्थलों पर यह कठिन कार्य आसानी से सम्पन्न होता है जो गुरुदेव-श्री की ऊर्जस्वी लेखन-क्षमता का सूचक है। इसी प्रकार 'द्‌यालु राज्जा' शीर्षक कहानी में राजा का अंतर्द्वंद्व देखने लायक है जो बहुत कम शब्दों में साकार हो उठा है- **"राज्जा नैं सोच्ची- मैं तै बड्डे धरम-संकट मैं फँस ग्या । कबूत्तर नैं ना बचाऊं तै यो बिचारा जान तै ज्यागा । कबूत्तर नैं ना छोड्डूं तै बाज भूक्खा मर ज्यागा । माड़ी वार वे सोच-बिचार करदे रहे । फेर वे भित्तर-ए-भित्तर हाँस्से ।"** यहाँ इतने कम शब्दों में राजा के मन में चलने वाली दुविधा को आकार दे दिया गया है कि बिहारी की काव्य-कला याद आती है। राजा जब "भित्तर-ऐ भित्तर हाँस्से" तो स्पष्ट हो गया कि दुविधा समाप्त हो चुकी है और वे एक निश्चित कर्त्तव्य का पालन करने के लिए कटिबद्ध हो चुके हैं। अवसर राजा के जीवन की कठिन से कठिन परीक्षा का है परन्तु राजा को वह एक खेल जैसा प्रतीत हो रहा है। इसीलिए ऐसी कठिन परिस्थिति में भी वे भीतर ही भीतर हँस सकते हैं। यह हँसी धर्म के आधार पर कठिनाई का उपहास करने वाली हँसी है। परिस्थितियों को स्वयं पर हावी न होने देने की दृढ़ता से पैदा होने वाली हँसी है यह। कहानी का यह छोटा-सा वाक्य अर्थ की अनेक परतें अपने में समेटे हुए है। एक ओर यह राजा के **जीवट** को तो दूसरी ओर परीक्षा के **बौनेपन** को उभारता है। दोनों के बीच का तनाव इस अकेले वाक्य से उद्‌घाटित हो जाता है। उल्लेखनीय है कि ऐसे वाक्य उस हरियाणवी में लिखे गए हैं, जिसमें लिखित कहानियों व गद्य के अन्य रूपों की कोई परम्परा नहीं है। स्पष्ट है कि ऐसे व्यंजक वाक्य कहानियों के गठन तथा विन्यास में अपनी अर्थ-समृद्ध भूमिका तो निभाते ही हैं, **हरियाणवी के आगामी साहित्य को अत्यंत ऊर्जस्वी परम्परा की विरासत भी सौंपते हैं ।**

सुगठित कथा-विन्यास इस विरासत की विशेषता है। सभी कहानियां मनुष्य-मात्र के लिए

मूल्यवान् विचार अभिव्यक्त करती हैं। ये विचार पूरी कहानी के माध्यम से भी व्यंजित होते हैं और कहानी के बीच-बीच में भी प्रसंगानुसार उभरते हैं। कहानी के बीच में आने वाले विचार प्रायः कथा-प्रवाह में बाधा उपस्थित करते रहे हैं परन्तु प्रस्तुत कहानियां विचारों को इस कुशलता से व्यक्त करती हैं कि न कथा-प्रवाह बाधित होता है और न ही विचार मखमल में पैबंद की तरह अलग से आकर्षित करते हैं। कहीं ये विचार संवादों के रूप में व्यक्त हुए हैं तो कहीं वर्णन के रूप में। संवाद शैली जैन आगमों में ज्ञान-प्राप्ति के प्रमुख साधन के रूप में प्रयुक्त होती रही है और इस सुदृढ़ परम्परा का दक्ष उपयोग इन कहानियों में किया गया है। 'परभू के दरसन' शीर्षक कहानी में भगवान् महावीर ने फरमाया है, **"हे गोत्तम! न्यूं-ए होया करै। जो भूंडे करम आदमी नै पैहल्यां कर राक्खे हों, जिब ताईं उनका फल ना भोग ले, वे कटते कोन्यां अर आपणे टैम पै परगट होया करैं। नंदन मनियार बेमारी तै छूट्या-ए कोन्यां।"** यहां जैन-दर्शन के कर्म-सिद्धान्त को बताया गया है। नंदन मनियार के विषय में बताते हुए भगवान् महावीर इस सिद्धांत को कह देते हैं। सम्पूर्ण कथा-विन्यास के बीच में आया यह सिद्धान्त और विचार कथा प्रवाह को बाधित करने के स्थान पर गति प्रदान करता हैं। 'नंदन' नामक मुख्य पात्र की कहानी इस से और अधिक उजागर होती है। यही है **'विचार'** को भी कहानी-कला का अंग बनाकर उपयोग करने का सामर्थ्य, जिस से ये कहानियां सम्पन्न हैं। 'सुथराई का घमण्ड' शीर्षक कहानी में सनत्कुमार के त्रिलोक-विख्यात रूप-सौंदर्य को देखने दो देवता उनके पास आते हैं। राजदरबार में वे सनत्कुमार के सौंदर्य के साथ-साथ उसके सौंदर्य-विषयक अहंकार को भी देखते हैं। तभी उसे कोढ़ हो जाता है। वह वैराग्य-भाव में निमज्जित होकर मुनि-दीक्षा अंगीकार कर लेता है। वहीं दोनों देव तपस्वी मुनिवर सनत्कुमार के पास वैद्य बनकर आते हैं और उनके सम्मुख उन्हें नीरोग बना देने का प्रस्ताव रखते हैं। मुनिवर अपनी उंगली पर थोड़ा- सा थूक लेकर अपने रोगी शरीर पर लगाते हैं। जहां थूक लगता है, वहीं शरीर पूर्ण स्वस्थ हो जाता है। तब मुनि सनत्कुमार कहते हैं, **"सरीर के रोग मेट्टण खात्तर तै मेरे धोरै घणी-ए सिद्धी सैं। पर सरीर तै मेरा कोये बी मतलब कोन्या। यो बेमार रूहै अक ठीक रूहै, मन्नैं के। मैं तै आतमा पैं चड्ढ्या होया करमां का मैल धोणा चाहूं सूं। या तै मेरी कमअकली थी अक् ईब ताईं मैं सरीर के रूप नैं-ए देखदा रह्या।"** स्पष्ट है कि यहां एक दार्शनिक विचार रूपायित किया गया है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि कहानी दार्शनिकता का संवहन करते हुए भी बोझिलता से पूर्णतः दूर व सुरक्षित बनी रही। वैचारिकता उभरी तो कथानक की घटनाओं के कुशल ताने-बाने से स्वयमेव उभरी, कहानी पर उसे आरोपित नहीं किया गया। यही कारण है कि **एक दार्शनिक विचार भी पाठक के लिए हृदयग्राही बन गया। विचार यदि अनुभूति बन जाये तो वह साहित्यिक उपलब्धि का चरम शिखर होता है,** जिसे उपरोक्त उद्धरण में लेखकीय क्षमता ने सहजता से स्पर्श किया है। अनुभूति बन जाने वाला एक और विचार 'मामन सेट के बलद' शीर्षक कहानी में भगवान्

महावीर के मुखारविंद से व्यक्त हुआ है- **"जिस धन तै आदमी का जी आच्छे काम करण मैं लाग्गै ओ धन पुन्न का अर जिस तै जी मैं कोए आच्छा काम करण का ख्याल ना आवै ओ धन पाप का हो सै ।"** यहां पाप और पुण्य के धन के बीच अंतर कितनी सादगी से बता दिया गया है! अनुभव से आलोकित हो उठने वाले विचार के रूप में यह पूरी कहानी उभरी है। इसी प्रकार ' करणी अर भरणी' शीर्षक कहानी में भी घटना- संकुलता के बीचों-बीच चलने वाले संवादों में से एक विचार आया है-**"या राज-पाट की भूख घणी माड़ी हो सै ।"** यहां **'माड़ी'** शब्द की अर्थ-व्यंजकता देखते ही बनती है। हरियाणवी का ठेठ शब्द है यह, जो तृष्णा की हीनता से लेकर लोभी व्यक्ति के संताप और उसकी नीचता तक अनेक अर्थ व्यक्त कर रहा है। उपरोक्त सभी तथा ऐसे ही अन्य विचार मनुष्यता की रक्षा एवम् वृद्धि के लिए कितने मूल्यवान् हैं, यह अलग से बताने की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न पात्रों के जीवन-संदर्भों से कहानी में उगते इन विचारों को आचरण से सार्थक किया जाए। आचरण भावात्मक सक्रियता के बीज से उगता है और ऐसे बीज आते हैं इन कहानियों के प्रभाव से। विचार, अनुभव और संवेदनायें इन रचनाओं में परस्पर इस सीमा तक संगुम्फित हैं कि उन्हें एक-दूसरे से अलग करना उनके साथ अन्याय करने जैसा लगता है। यह इनके कथानक का सुगठित विन्यास भी है और समर्थ मूल्यों का 'कहानी' के रूप में समर्थ संवहन भी।

इन कहानियों में कथा-रचना की एकाधिक पद्धतियों के ऊर्जस्वी प्रयोग से वैविध्य की पर्याप्त सृष्टि प्राप्त होती है। वर्णन कथा-रचना की सर्वाधिक उपयोग की गई पद्धति है। कारण यह कि वर्णन से कथा-रस की सृष्टि भी होती है और कहानी इस से आगे भी बढ़ती है। आवश्यकतानुसार कभी तेज गति से तो कभी मंद गति से। वर्णन से एक ही बात को रोचक ढंग से विस्तार भी दिया जा सकता है और विस्तृत क्रिया-व्यापार को संक्षिप्त भी किया जा सकता है। जो बातें किसी भी अन्य पद्धति व माध्यम से व्यक्त नहीं की जा सकतीं उनके लिए वर्णन एक सक्षम पद्धति है। प्रस्तुत पुस्तक में इस पद्धति का समर्थ प्रयोग स्थान-स्थान पर किया गया है। 'द्यालु राज्जा' शीर्षक कहानी के इस उद्धरण में वर्णन की कला द्रष्टव्य है-**"जिब्बै-ए राज्जा नैं सेवकां के हाथ एक तराज्जू मंगाया । उन् नैं एक पालड़े मैं कबूत्तर बिठाया अर दूसरे पालड़े मैं चक्कू तै आपणी देही का मांस काट-काट कै काड्ढण अर धरण लाग्गे । पर यो के? राज्जा नैं आपणे सरीर का आद्धा मांस काढ कै पालड़े पै धर दिया । फेर बी कबूत्तर आल़ा पालड़ा-ए भारी रह्या । राज्जा मेघरथ की देही जाणुं लहू मैं न्हाई होई बेट्ठी थी । ताक्कत घटती जा थी । फेर भी उन नै धीरज ना छोड्या । आक्खर मैं राज्जा हिम्मत करकै पालड़े कान्नीं गए अर वे आपणे-आप पालड़े मैं जा कै बैठगे । भित्तर-ए-भित्तर उन् नैं संतोस था अक् उनका सरीर एक कबूत्तर की जान बचाण मैं काम आण लाग रह्या सै ।"** इस वर्णन से धारा प्रवाह कथा-रस की सृष्टि हुई है। कहानी तेजी से आगे बढ़ी है। विस्तृत

क्रिया-व्यापार संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त हो गया है कि इसके एक भी अंश को काट दिया जाये तो कहानी लड़खड़ा जायेगी। **एक-एक शब्द अपने होने की सार्थकता और अनिवार्यता स्वयं सिद्ध करता है** । यही है वर्णन का समर्थ प्रयोग, जो लगभग सभी कहानियों की विशेषता है।

इनकी एक और विशेषता है-चित्रात्मक भाषा की जीवंतता। हरियाणवी यों भी इस मामले में काफी समृद्ध है। ' आनंद का खुज्जाना' में इस दृष्टि से ये वाक्य ध्यातव्य हैं– **"कपिल सोच मैं डूब ग्या । उसके मूं पै एक रंग आंदा अर चल्या जांदा । दूसरा रंग आंदा, फेर तीसरा । चाणचक खुसी तै उसका मूं खिल ग्या ।"** साफ-साफ घटित होती दिखाई देती है कहानी। कप्पिल की खुशी दिखाई देती है- उसका मुँह खिलने के रूप में। इसी प्रकार 'भगवान महावीर अर चण्डकोसिया सांप' की ये पंक्तियां भी उल्लेखनीय हैं- **"गुस्से मैं भरे फफकारते होए सांप नैं ध्यान मैं खड़े महावीर के पायां मैं डंक मार्‌या । ईब कै उसके जैह्‌रीले दांद महाबीर के पां के गूंठे मैं गडगे। उनके गूंठे तै खून की जंगा दूध बैह्‌ण लाग्या ।"** भाषा का यह प्रयोग उस कौशल का पुष्ट प्रमाण है, जो अनेक कहानियों में स्थान-स्थान पर शब्द-रेखाओं से निर्मित होते चित्रों में मुखर होता है। ये चित्र कहानियों को जीवन्त रूप देने के साथ-साथ पाठक की कल्पना-शक्ति को जाग्रत भी करते हैं। यह कार्य अनेक उपमाओं ने भी बाखूबी सम्पन्न किया है। जैसे 'छिमा की मूरत' कहानी का यह अंश- **"फेर सुदरसन जमीन पै पलोथी ला कै बैठ ग्या । उसनैं ओड़े तै-ए भगवान् महाबीर की बंदना करी अर भित्तर-ए-भित्तर नमोक्कार मंतर पड़्ढण लाग्या । उसके भित्तर पहाड़ बरगी सान्ती थी ।"** यदि मन की शान्ति को यहां पहाड़ जैसी न कहा गया होता तो पाठक उसे देख नहीं सकता था। इस उपमा ने शान्ति की विराटता और अडिगता को एक साथ व्यंजित कर दिया ।

इन कहानियों के माध्यम से व्यंजित होने वाले कथा-कौशल की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है- ठेठ हरियाणवी का ठाठ। हरियाणवी लोक-जीवन की समृद्धि कहीं मुहावरों के रूप में आई है तो कहीं कहावतों के रूप में। ' आनन्द का खुज्जाना' में कप्पिल जब राजा के सामने अपराधी बन कर पेश हुआ तो **"उसकी आंख धरती मैं गड्‌डन नैं हो र्‌ही थी ।"** साथ ही 'दयालु राज्जा' में राजा अपने उत्तराधिकारी के विषय में जानने पर कहता है, **"थमनैं सोल़ा आन्ने ठीक राय दी सै ।"** इसी प्रकार 'अनाथ कुण सै' में साधु ने जैसे ही राजा श्रेणिक को अनाथ कहा तो, **"या बात सुण कै राज्जा कै पतंगे लड़गे ।"** इसके अतिरिक्त 'साद्‌धू के सत्संग' में धर्म से दूर रहने वाले राजा को आचार्य केस्सी स्वामी जब धर्म के विषय में ज्ञान देकर आश्वस्त कर देते हैं तो कहानी कहती है, **"घणी बात के-राज्जा का पेट्‌टा भर ग्या ।"** ससुर ने बहुओं की समझदारी परखने के लिए जब धान के पांच-पांच दाने सभी को संभालने के लिए दिए तो बड़ी बहू ने 'अक्कल आपणी-आपणी' शीर्षक कहानी में सोचा- **"मेरा सुसरा तै बुड्‌ढाप्पे मैं अक्कल के पाच्छै लठ लिए हांडै सै ।"** इन सभी उद्धरणों में ठेठ हरियाणवी मुहावरों ने भाषा

को जो व्यंजक क्षमता प्रदान की है, वह निःसन्देह इन कहानियों को हरियाणवी की पूरी तरह अपनी कहानियां प्रमाणित करती है। **भाषा के साथ-साथ यह अनुभव की प्रामाणिकता एवम् परिपक्वता का सूचक भी है ।** पूर्णतः उचित बात के लिए **'सोला आन्ने ठीक'** तिलमिला उठने के लिए **'पतंगे लड़ना'**, अच्छी तरह सन्तुष्ट होने के लिए **'पेट्टा भरना'** और निरंतर मूर्खता के लिए **'अक्कल के पाच्छै लठ लिये हांडणा'** जैसे मुहावरों के प्रयोग ने इन कहानियों की भाषा को लोक-जीवन का जो रंग दिया है, वह इस कारण से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि हरियाणवी के पहले कहानी-संग्रह से इस सीमा तक परिपक्व भाषा की अपेक्षा सहजता से नहीं होती। इसीलिए भाषा का यह परिपक्व रूप पहली ही पुस्तक में पा कर पाठकों को सुखद आश्चर्य होगा। 'रोहिणिया चोर' में नगर के व्यापारी जब बढ़ती चोरियों की शिकायत राजा से करते हैं तो राजा के सामने अपने दरबारियों की झूठी राज्य-प्रशंसा बेनकाब हो उठती है। तब राजा सोचता है- **"कोए तै ईसा होंदा जो साच्ची बतांदा । आड़े तै सारे कूएं मैं-ए भांग पड़ र्‌ही सै ।"** चोर की अत्यंत चतुराई को इसी कहानी में यह कह कर व्यक्त किया गया है कि वह **"गाड्डी की गाड्डी अकल ले र्‌हया था ।"** भगवान् महावीर की देशना के विषय में लिखा गया है, **"सूक्खे धान्नां पै धरम का पाणी एक सांस बरसै था ।"** हरियाणा की इन कहावतों ने इन कहानियों की भाषा को और अधिक गरिमा प्रदान की है। भरपूर दुःख में जब भरपूर सुख मिल जाये तो कहा जाता है कि **"सूक्खे धान्नां मैं पाणी आ ग्या ।"** दूसरी ओर धाराप्रवाह बारिश के लिए यह मुहावरा प्रचलित है कि **"राम एक सांस बरसै सै ।"** कहावत के साथ मुहावरे का भी एक छोटे-से वाक्य में प्रयोग (सूक्खे धान्नां पै धरम का पाणी एक सांस बरसै था।) यह बताने के लिए पर्याप्त है कि लेखक को एक ओर हरियाणवी पर पूरा अधिकार प्राप्त है तथा दूसरी ओर लेखक की साहित्यिक क्षमतायें भी असंदिग्ध हैं। इन दोंनों के मणि-कंचन संयोग के बिना इतना समर्थ वाक्य नहीं गढ़ा जा सकता था। इन कहानियों में ऐसे वाक्य अनेक हैं।

हरियाणवी के अनेक ऐसे ठेठ प्रयोगों से ये रचनायें सुसज्जित हैं, जिनका किसी अन्य भाषा में पूर्णतः ठीक-ठीक अनुवाद होना लगभग असंभव है। ऐसे प्रयोग प्रत्येक भाषा के पूरी तरह अपने और अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने वाले प्रयोग होते हैं। 'साच्चा भगत कामदेव सरावग' में कामदेव नामक श्रावक की साधना की परीक्षा लेने आने वाला देव हाथी बनकर कामदेव को पांवों तले रौंदते हुए कहता है-**"तेरे हाड-हाड दरड़ द्‌यूंगा ।"** इस प्रयोग की व्याख्या तो की जा सकती है परन्तु ठीक-ठीक यही अभिव्यक्ति इतने ही शब्दों में संभवतः विश्व की किसी भाषा में नहीं हो सकती। हरियाणवी के उक्त वाक्य में ही संपूर्ण ऊर्जस्विता के साथ इस स्थिति का समस्त तीखापन व अर्थ- गौरव व्यक्त हो सकता है। 'रोहिणिया चोर' में चोरियों की शिकायत राजा से व्यापारी इन शब्दों में करते हैं-**"म्हाराज! हम तै चोरियां नैं खा लिए ।"**

आशय यह कि चोरियों से हमें इतनी पीड़ा हो रही है जितनी किसी जानवर द्वारा खा लेने पर होती है। घनीभूत पीड़ा की यह अभिव्यक्ति हरियाणवी की अपनी विशेषता (जो शेष में नहीं) है। 'छिमा की मूरत' का अर्जुन माली जब प्रतिदिन न्यूनतम छह पुरुषों और एक स्त्री को मारने लगा तो "**सारी नगरी मैं रोहा-राट माच ग्या ।**" तुलना करके देखा जा सकता है कि हिन्दी के '**हाहाकार**' से हरियाणवी का '**रोहा राट**' शब्द कितना अधिक कारुणिक व मार्मिक है! 'अनाथ कुण से' में राजा की गर्वोक्ति है- "**मैं तै आपणी परजा का नाथ सूं अर कत्ती लोह-लाठ ।**" यहां '**लोह-लाठ**' भी हरियाणवी का पूरी तरह अपना प्रयोग है। इतना सशक्त और प्रभावशाली प्रयोग है यह कि "**कत्ती लोह-लाठ!**" इन सभी प्रयोगों के विषय में यह कहना कदाचित् आवश्यक है कि इनमें से एक भी 'प्रयोग के लिए प्रयोग' नहीं किया गया है और न ही अपना हरियाणवी पांडित्य पदर्शित करने के लिए कहानियों में इन्हे बलात् ठूँसा गया है। कथा-प्रवाह में ये सभी प्रयोग इस प्रकार आये हैं कि इनके आने का अलग से आभास तक नहीं होता। कहानियों के रूप-विधान हेतु ये प्रयोग उनके लिए इतने अनिवार्य बन पड़े हैं कि कहानियों के साथ अन्याय किए बिना इन्हें उन से अलग नहीं किया जा सकता। यही है ठेठ हरियाणवी का ठाठ।

शब्द-चयन से लेकर वाक्य-गठन तक, स्थिति वर्णन से लेकर संवाद-योजना तक, कथानक से लेकर चरित्र-निर्माण तक और वातावरण-चित्रण से लेकर व्यंजक भाषा तक- कथा-रचना का एक भी पक्ष ऐसा नहीं, जिसकी दृष्टि से इन कहानियों को कमजोर कहा जा सके । ऐसा बहुत कम होता है कि किसी भाषा में पहले-पहल (गद्य-रूप) कहानियों की रचना हो और वह भी अत्यधिक सजग निपुणता के साथ! यह दुर्लभ उपलब्धि इस पुस्तक की भी है और हरियाणवी गद्य-साहित्य की भी। जैन धर्म प्रभावक वत्सल-निधि गुरुदेव श्री सुभद्र मुनि जी महाराज का इन कहानियों के माध्यम से रूपायित होने वाला कथाकार रूप श्रेयस्कर भी है और प्रेरक भी। इस उत्कृष्ट, अद्वितीय एवम् ऐतिहासिक महत्त्व की कृति प्रस्तुत करने के लिए उनकी सृजन-क्षमता को बारम्बार वंदन।

— [signature]

हरियाणवी जैन कथायें

परभू के दरसन

एक बर राजगीर के गुणशील बाग मैं भगवान महावीर के दरसन करण राज्जा सरेणिक ठाठ-बाट गेल्यां आया। दरसन करकै ओ आपणे महलां मैं चाल्या गया। उसके जाएं पाछै, माड़ी ए वार होई थी, अक एक ओर अजनबी-सा राज्जा उनके दरसन करण आया। ओ सरेणिक तै घणा-ए सुथरा था। उसकी गेल्यां सरेणिक तै सो गुणे सेवक अर लोग-लुगाई थे। उसके अरथ, हात्थी, घोड़े अर दास-दास्सी भी घणे-ए सुथरे अर सब तै न्यारे चिमकण आले थे।

इन्दरभूती गोत्तम (जो महावीर के चेल्ले थे) के देखते-ए-देख्यां वे सारे न्यूं गैब हो गे जाणुं असमान मैं बिजली चिमकी हो, अर जिब्बै-ए गैब हो गी हो। यो देख कै गोत्तम स्वामी नैं घणा ताज्जब होया। उन नैं भगवान महावीर स्वामी की बंदना करी अर सुआल बूज्झ्या-

"हे परभू! मन्नैं आपणी आंख्यां तै ईसा कोए दरसन करण आला नहीं दीख्या जो आंधी-बिजली की तरियां आया हो अर चाणचक हवा की तरियां गैब हो ग्या हो। हे भगवान! यो कुण से मुलक का राज्जा था, मेरे तै बताण की किरपा करो।"

भगवान बोल्ले, "हे गोत्तम! यो किसे मुलक का राज्जा ना था। यो तै दर्दुर नां का देव था। तम नैं ठीक बूज्झी, अक यो बिजली की तरियां आया अर आंधी की तरियां चाल्या क्यूं गया?"

"हां भगवान! मैं यो हे जाणना चाहूं सूं।"

"तै सुणो गोत्तम! यो दर्दुर देव इस्से सहर मैं रह्या करता। इसके तीसरे पूरब जनम का नां था- सेट नंदन मनियार। एक बर यो मेरे समोसरण मैं आया था। मेरी बाणी सुण कै इसनै सरावग के बरत ले लिए थे। इस के जी मैं पूरी सरधा होगी थी। नेम-बरत पालती हाणां इसनैं दुनिया के भले के घणे-ए काम करे थे। उस टैम इसनैं नंदा नां की एक बौड़ी भी बणवाई थी। राज्जा सरेणिक तै इसनै इस काम की इजाजत मांगी थी। सरेणिक नै बौड़ी बणान का काम आच्छा सिमझ कै इजाजत दे दी थी।

बौड़ी बण कै त्यार हो गी तै राजगीर की जन्ता नैं फैदा होया। बौड़ी का पाणी खसबू आल़ा था। उसमैं लोग न्हाते। आण-जाण आले मुसाफर अराम करते। दुनिया नंदन मनियार की बड़ाई करदी, अर उस तै धन्न-धन्न कहती। नंदन नै आपणी बड़ाई आच्छी लागती। बौड़ी बणवाएं पाछे इसनैं लोग्गां की भलाई खात्तर बाग, धरमसाल़ा, होसधालय, दानसाल़ा, अलंकार साल़ा, अर चित्तरसाल़ा बणवाईं। सारे लोग उनका फैदा ठाण लाग्गे। मनियार की घणी-ए बडाई होण लाग गी।

जिब तै नंदन नैं बरत लिये थे, उसनै साधुआं की बाणी सुणन का मोक्का नहीं मिल्या था। जाएं तै ओ आपणे बरतां नैं भूल ग्या अर दुनिया की बडाई मैं-ए बिचल़ ग्या।

समै कदे एक जीसा कोन्यां रहंदा। समै खराब आया। उसके सरीर मैं कई बेमारी लाग गी। उसनै घणे-ए इलाज कराए पर कोए फैदा ना होया। इलाज करण खात्तर दूर-दूर तै बैद भाज्जे आए। सब नैं आपणा-आपणा ग्यान अर तजरबा अजमाया, पर कोए-सा भी कामयाब कोन्यां होया।"

"हे परभू! ईसे आच्छे-आच्छे काम करण आल़ां का भी बेमारी तै पांडा ना छूटता?" गोत्तम नैं बीच मैं-ए हाथ जोड़ कै बूज्झूया।

"हां गोत्तम! न्यूं ए होया करै। जो भूंडे करम आदमी नैं पहल्यां कर राक्खे हों, जिब ताईं उनका फल़ ना भोग ले, वे कटते कोन्यां। ओं आपणे टैम पै परगट होया करैं। उदै मैं आया करैं। करमां की दुआई बैद धोरै ना होती। हे गोत्तम! नंदन मनियार बेमारी ते छूट्या कोन्यां।

आग्गै सुणो- नंदन मनियार घणा-ए नाउमेद हो ग्या। आक्खर मैं उसनै एक बेमारी खतम करण खात्तर भारी इनाम अर पीशे देण की डूंडी पिटवाई , पर वा भी बेकार गई। उसका किस्से भी तरियां इलाज ना होया। उसकी उमेद टूट गी। मरण का टैम नजदीक आता रह्या। उसका जी उसकी बणवाई होई बौड़ी मैं लाग्या रह्या। धरम-ध्यान उसका छूट ग्या।

टैम आया, अर ओ मर ग्या।

... ओ नंदन मनियार सेट मरें पाछै आपणी बौड़ी मैं मींडक के रूप मैं पैदा होया। बौड़ी पै आन्दे-जान्दे, नहान्दे, अराम करण आले, बेमारियां तै छूट्टण आले, सारे लोग दान लेत्ते, अलंकार लेत्ते अर सदाबरत की रोट्टी खान्दे होए लोग नंदन मनियार की दिन-रात बडाई कर-कर कै छिक्या ना करते। मींडक बौड़ी मैं रह्वै था। ओ बार-बार नंदन मनियार का नां सुणदा रह्या, सुणदा रह्या। ओ भित्तर-ए भित्तर सोच्चण लाग्या, 'यो नंदन मनियार कुण था? यो नाम तै ईसा लाग्गै सै जाणुं सुण राख्या हो!'

दन-रात उसके कान्नां मैं पड़ती होई बात एक दन उसके दमाग मैं आ गी। उस कै आपणा पाछला जनम याद आ ग्या। ओ समझ ग्या, अक